नयी तालीम का बुनियादी ढाँचा

❑ प्रस्तुति डा. एल. एन. मित्तल

बुनियादी शिक्षा पर हमने लगातार संवाद कायम रखा है । हमारा उद्देश्य बुनियादी शिक्षा का महिमामंडन नहीं है बल्कि उसका एक परिप्रेक्ष्य के रूप में स्मरण है । यदि हमें शिक्षा चिंतन को देशज संदर्भों से जोड़ना है तो अतीत के देशज शैक्षिक प्रयोग और अनुभव इसके लिए रास्ता बनाते हैं । यह कहने की जरूरत नहीं कि बुनियादी शिक्षा का गांधीवादी दर्शन पश्चिम से कतई स्वतंत्र है । इसकी एक बानगी यहां उद्धरित है।

महात्मा गांधी ने 22 अक्टूबर, 1937 को वर्धा शिक्षा परिषद से बोलते हुए 'नयी तालीम' का बुनियादी ढाँचा प्रस्तुत किया था।

महात्मा गांधी कहते हैं - ''मैं इस ख्याल का हूं कि प्राथमिक, माध्यमिक दोनों शिक्षाओं को मिला दिया जाये। वजह यह है कि मुझे जिस चीज का पुराना तजुरबा है, जिसे उम्मीद है कि आप लोग भी कबूल करेंगे । सन् 1915 से लेकर अब तक जितना हिन्दुस्तान के गांवों में मैं घूमा हूं, और जिस हद तक उसके अन्दर बैठा हूं । उतना शायद ही कोई घूमा और बैठा हो। दक्षिण अफ्रीका में भी मैंने जिसका खूब अनुभव किया है, क्योंकि वहां मेरा ज्यादातर संबंध गिरमटों से रहता था और मैं उन्हीं में काम करता था। जिस प्रकार 22-23 बरस की उम्र से जिन लोगों के बीच रहकर जो अनुभव मैंने पाया, उससे मैं उनकी हालात बखूबी जानने लगा हूं।

प्राथमिक शिक्षा की जो शक्ल आज है, उसे मैंने गांवों में देखा है और इधर तो मैं एक गांव में ही रहने लगा हूं । और जब मैं लड़कों की पढ़ायी को देखता हूं तो फौरन समझ लेता हूं कि वह क्या चीज है क्योंकि उसका न कोई ढंग है और न ध्येय है। इसलिए मैं समझता हूं कि अगर हम देहातों को कुछ देना चाहते हैं तो जरूरी है कि सैकन्ड्री तालीम को प्राइमरी के साथ मिला दिया जाये । इसलिए अब हमने जो कुछ बनाना है या बनाने जा रहे हैं, वह शहरों के लिए नहीं, बल्कि पूरे गांवों के लिए है ।

मेरे ख्याल से आजकल देहाती मदरसों में लड़कों को जो कुछ पढ़ाया जाता है, उससे देहात वालों को नुकसान ही होता है। लड़के कुछ समय के लिए मदरसे जाते हैं, मगर वहां जाकर भी उन्हें असन्तोष रहता है । उनमें से अधिकतर या तो शहरी बन जाते हैं, या गांव के के प्रति अपना कर्तव्य भूल जाते हैं और कुछ तो बदमाशी बगैरा भी सीख जाते हैं । इसलिए अपने अब तक के अनुभव से मैं कह सकता हूं कि हमारी मौजूदा प्राइमरी तालीम से गांव वालों को फायदा नहीं पहुंचा ।

तो सवाल होता है कि इस प्राथमिक शिक्षा का स्वरूप क्या हो ? मेरा तो जवाब यह है कि किसी उद्योग या दस्तकारी को बीच में रखकर उनके जरिये ही यह सारी शिक्षा दी जानी चाहिए । चन्द धन्धों की मारफत मैंने उनको (अपने लोगों को) जो तालीम दी है उससे उन्हें फायदा ही पहुंचा है । अपनी वकालत के दिनों में भी मैं घर पर कुछ न कुछ उद्योग किया करता था, और बच्चों को भी बढ़ईगिरी बगैरह की तालीम देता था। जूते बनाने का काम मैंने श्री केलन बैक से सीखा, जो खुद 'टेचिस्ट मोनेस्टरी' में सीखकर आये थे, क्योंकि वे लोग हिन्दुस्तानियों को सिखाते नहीं थे । इस प्रकार जिन्होंने मुझसे तालीम ली, मैं नहीं समझता हूं कि उनकी दिमागी हालत कमजोर रही या कोई नुकसान उन्हें पहुंचा । टालस्टाय फार्म में भी शिक्षा का यही तरीका रहा । वहां तो तरह-तरह के लड़के थे । अच्छे, बुरे और बदमाश सभी, इनमें हिन्दू भी थे, मुसलमान भी थे और पारसी भी थे । सब एक साथ मिलजुल कर रहते थे और अपने-अपने धर्मों का पालन भी करते थे । वजह इसकी यह थी कि मैंने उनको सिर्फकिताबी तालीम न दी बल्कि साथ-साथ कुछ धन्धे भी सिखाये । इनमें कुछ ने चमड़े का काम सीखा, कुछ ने बढ़ईगिरी सीखी और चन्द ऐसे भी निकले जो आज इन धन्धों के जरिये काफी कमा रहे हैं ।

लेकिन आज में जो चीज आपके सामने रखने जा रहा हूं, वह पढ़ाई के साथ-साथ एक धन्धा सिखा देने की चीज नहीं

है। मैं तो अब यह कहना चाहता हूं कि लड़कों को जो भी सिखलाया जाये, सब किसी न किसी उद्योग या दस्तकारी के जरिये ही सिखाया जाये। आप कह सकते हैं कि मध्य युग में हमारे यहां लड़कों को सिर्फ धन्धे ही सिखाये जाते थे । मैं मानता हूं - परन्तु उन दिनों धन्धों के जरिये सारी तालीम देने की बात लोगों के सामने न थी । धन्धा सिर्फ धन्धे के ख्याल से सिखाया जाता था, हम धन्धे या दस्तकारी की मदद से दिमाग को भी आला बनाना चाहते हैं । आज हालत यह है कि लोहार का लड़का लोहारी नहीं जानता, और सुतार का सुतारी छोड़ बैठा है । इन्होंने किताबी तालीम तो पायी मगर अपने पेशे को भूल गये। उससे मुंह फेर लिया। अब गांव छोड़कर शहर में बसते हैं ओर मुहर्ररी करते हैं । अगर वे पढ़-लिख कर भी अपने पुस्तैनी धन्धों को नहीं छोड़ते और उसमें तरक्की करके दिखलाते तो आज हिन्दुस्तान की जैसी बुरी हालत हो गई है, न हो पाती । आज देहात में कहीं भी चले जाइये, अच्छे बढ़ई, लौहार या कारीगर के दर्शन नहीं होते। मेरे जो साथी गांव में बैठकर काम कर रहे हैं, उनका भी यही तजुर्बा है कि वहां जो बढ़ई वगैरह हैं, वे अपने धन्धे के लिहाज से नाकामयाब से हैं । दूर क्यों जाइये, इस चर्खे को ले लीजिए, जो सारे हिन्दुस्तान में फैला हुआ था । मगर अंग्रेज इसे इंग्लैण्ड ले गये और वहां इसमें इतनी तरक्की कर दी कि बड़ी-बड़ी मिलें खड़ी हो गई । मेरा आशय यह नहीं है कि उन्होंने जो कुछ किया, बहुत अच्छा किया। मगर इसमें कोई शक नहीं है कि जब उन लोगों ने इतनी तरक्की कर ली तब हम जो कुछ हमारा था, उसे भी खो बैठे।

इसलिए मेरी दरख्वास्त है कि हम सिर्फ उद्योग या दस्तकारी ही न सिखायें बल्कि इन्हीं के जरिये बच्चों को सारी तालीम दें ।

मसलन तकली को ही ले लीजिये । इस तकली का सबक हमारे विद्यार्थी का पहला सबक होगा, जिसके जरिये वह कपास का, लंकाशायर का ओर अंग्रेजी सल्तनत का बहुत कुछ इतिहास सीख सकेगा। यह तकली कैसे चलती है ? इसका क्या उपयोग है और इसके अन्दर क्या-क्या ताकत पड़ी हुई है ? यह सब खेल-खेल ही में बालक जान लेता है। इसी के जरिये थोड़ा गणित का ज्ञान भी उसे मिल जाता हैं क्योंकि तकली पर जो सूत के तार उसे गिनवाये जायें और पूछा जाये कि कितने तार कते तो धीरे-धीरे उसके अन्दर से गणित का भी काफी ज्ञान कराया जा सकता है । और खूबी यह है कि उसके दिमाग पर इन सबका जरा भी बोझ नहीं पड़ता । सीखने वाले को तो पता भी नहीं कि वह कुछ सीख रहा है । वह अपने खेलता, कूदता और गाता रहता है, तकली चलाता रहता है और इसी में बहुत कुछ सीख लेता है ।

सिर्फ तकली की बात मैं इसलिए कर रहा हूं कि मैंने उसकी ताकत और उसके रोमांच का अनुभव किया है । मैं तो प्राथमिक शिक्षा के लिए तकली ही को बीच में रखना चाहता हूं । तकली मुझे सबसे ज्यादा इसलिए जंचती है कि इसे छोड़कर और धन्धों के लिए हमारे पास कोई सामान मौजूद नहीं है । तकली को न ज्यादा खर्च की गरज न सरंजाम की । पहले साल लड़कों को सब कुछ तकली ही के बारे में बतायें । इसके जरिये कमायी भी काफी हो सकती है और इसके फैलाव में कोई रुकावट भी नहीं आयेगी क्योंकि इसके सूत से जो कपड़ा बनेगा, उसके पहनने वालों की संख्या हमारे यहां इतनी है कि अपने ही बचों द्वारा बनाये गये कपड़े को छोड़कर दूसरा कपड़ा खरीदने की हमें जरूरत ही न पड़ेगी और यह कपड़ा खरीदना हम पसन्द भी करेंगे ।

मैंने सोचा है कि यह पाठ्यक्रम सात साल का रक्खा जाये । इससे जहां तक तकली का संबंध है, विद्यार्थी बुनाई तक के व्यावहारिक ज्ञान में जिसमें रंगाई और डिजाइनिंग आदि भी शामिल होंगे, निपुण हो जायेंगे ।

मैं इस बात के लिए बहुत ही उत्सुक हूं कि दस्तकारी के जरिये विद्यार्थी जो कुछ पैदा करे, उसकी कीमत से शिक्षक का खर्च निकल आवे; क्योंकि मुझे यकीन है कि देश के करोड़ों बच्चों को तालीम देने के लिए सिवा इसके और कोई रास्ता नहीं है और न ही यह मुमकिन है कि हम उस वक्त तक ठहरें जब तक कि सरकार अपने खजाने से हमें आवश्यक रूपया दे या वायसराय फौजी खर्च कम कर दें या इसी तरह का कोई कारगर जरिया निकल जाये ।

प्राथमिक शिक्षा की इस योजना में सफाई, आरोग्य और आहार सिद्धांतों का समावेश भी हो जाता है । इसमें बच्चों की वह शिक्षा भी शामिल समझिये जिससे वे अपना काम खुद करना सीखेंगे और घर पर अपने मां-बाप के काम में भी मदद पहुंचायेंगे। आजकल हमारे बच्चों को न सफाई का ख्याल रहता है न साफ सुथरेपन का, वे न तो अपने पैरों पर खड़ा हो जाना जानते हैं और न उनकी तन्दरूस्ती ही ठीक रहती है। मैं चाहूंगा कि उनके लिए संगीत के साथ लाजमी तौर पर ऐसी कवायद और कसरतें वगैरा का इन्तजाम हो जाये, जिससे उनकी तन्दरुस्ती सुधरे और जीवन तालबद्ध बने ।

मुझ पर यह इल्जाम लगाया जा रहा है कि मैं साहित्यिक या अदबी शिक्षा के खिलाफ हूं । मगर बात ऐसी नहीं है । मेरे स्वावलम्बन के पहलू पर भी हमला किया गया है । कहा यह गया है कि जहां प्राथमिक शिक्षा पर हमें लाखों रूपया खर्च करना चाहिये, वहां हम उल्टे बच्चों ही से इसे वसूल करने जा रहे हैं । साथ ही यह आदेश भी बतलाया जाता है कि इससे मुल्क की बहुत ताकत बेकार खर्च होगी । लेकिन अनुभव इस अंदेशे को गलत साबित कर चुका है । और जहां तक बच्चों पर बोझ डालने या उनका शोषण करने का सवाल है, मैं जानना चाहूंगा कि क्या यह बोझ उन्हें उनके सर्वनाश से बचाने के लिए नहीं है ? लेकिन जहां बच्चों को इस बात का बढ़ावा दिया जायेगा कि वे कातें और खेती के काम में अपने मां-बाप की मदद करें, वहां उन्हें यह महसूस करने का मौका भी दिया जायेगा कि उनका संबंध सिर्फ उनके मां-बाप से नहीं बल्कि अपने गांव और देश से भी है और उन्हें इसकी भी कुछ सेवा करनी चाहिये। मेरे ख्याल में तो तालीम का यही एक तरीका आता है। मंत्रियों से मैं कहूंगा कि खैराती तालीम देकर वे मुल्क के बच्चों को असहाय और अपाहिज ही बनायेंगे, जबकि उनकी शिक्षा के लिए उनकी खुद मेहनत कराकर वे उन्हें बहादुर और आत्मविश्वासी बना सकेंगे ।

तालीम का यह तरीका हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई सभी के लिए एक जैसा होगा । मुझसे पूछा जाता है कि मैं धार्मिक शिक्षा पर कोई जोर क्यों नहीं देता ? वजह यह है कि मैं उन्हें स्वावलम्बन का धर्म तो सिखा ही रहा हूं , जो मेरे ख्याल में सब धर्मों का असली रूप है ।

हाँ, जो लोग इस तरह की तालीम देकर तैयार होंगे । उन्हें रोजी देना राज का फर्ज होगा । और जहां तक शिक्षकों और अध्यापकों का सवाल है, इसे लाजमी सेवा का तरीका माना जाये। इटली का और दूसरे देशों का उदाहरण देकर उन्हें इसका महत्व भी बता दिया है ।

अपना रोजगार शुरू करने से पहले अगर हमारे नौजवानों को एक या दो साल के लिए लाजमी तौर पर सेवा का या पढ़ाने का काम करना पड़े तो इसे गुलामी कहना कहां तक ठीक होगा ? मैं नौजवानों से कहूंगा कि वे अपनी जिन्दगी का एक साल देश की सेवा के लिए मुफ्त में दें । खुशी-खुशी दे दें । इसके लिए कानून बनाने की जरूरत भी हुई तो वह जबर्दस्ती न कहलायेगी।

सात साल के अन्त में बालक को इस काबिल हो जाना चाहिये कि वे अपनी पढ़ाई का खर्च खुद अदा कर सकें और अपने परिवार के कमाऊ पूत बन सकें ।

हमारे यहां कौमी झगड़े होते रहते हैं, लेकिन यह कोई हमारी ही खासियत नहीं है, इंग्लैण्ड में भी ऐसी लड़ाईयां हो चुकी हैं और आज ब्रिटिश साम्राज्यवाद सारे संसार का शत्रु हो रहा है । अगर हम कौमी और अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष को बन्द करना चाहते हैं तो हमारे लिए यह जरूरी है कि जिस शिक्षा की मैंने यहां हिमायत की है उससे अपने बालकों को शिक्षित करके शुद्ध और सुदृढ़ आधार पर उसका आरंभ करें। मेरी इस योजना की तह में अहिंसा भरी हुई है। अगर सरकारी आमदनी में कोई कमी न हो और खजाना हमारा भरा हुआ रहे, तो भी हमारे लिए शिक्षा का यही तरीका उपयोगी रहेगा बशर्ते कि हम अपने बालकों को शहरी न बनाना चाहें ।

हम तो उन्हें अपनी संस्कृति, अपनी सभ्यता, और अपने देश की सच्ची प्रतिभा का प्रतिनिधि बनाना चाहते हैं और मेरे ख्याल से स्वावलम्बी प्राथमिक शिक्षा के सिवा किसी दूसरे ढंग से हम उन्हें ऐसा नहीं बना सकते ।''

गांधी जी ने अन्त में यही कहा है कि यूरोप या रूस या अमरीका हमारे लिए आदर्श नहीं हो सकते क्योंकि उनकी तजबीजें हिंसा पर आधारित हैं और अमरीका या इंग्लैण्ड शिक्षा पर जो लाखों रूपया खर्च करता है, वह लूट या शोषण का धन है । गांधी जी के अनुसार हम तो इस शोषण की बात सोच ही नहीं सकते हैं। इसलिए हमारे पास शिक्षा की इस अहिंसक योजना के सिवा और कोई उपाय नहीं रह जाता है ।

इसलिए गांधी जी के अनुसार नयी तालीम 'जीवन के लिए तालीम है ।' व्यक्ति का सुसामन्जस्य और समतोल विकास ही नई तालीम का ध्येय नहीं है, बल्कि एक ऐसे समाज का निर्माण करना इसका ध्येय है, जिसकी नींव न्याय पर आधारित हो, जिस समाज में अमीर और गरीब का भेदभाव न हो, जहां सबको आजादी का हक हासिल हो और अपनी रोजी मिलने का विश्वास हो । सच्ची शिक्षा वही है जिसे पाकर मनुष्य अपने शरीर, मन और आत्मा के उत्तम गुणों का सर्वांगीण विकास कर सके ।◆